जीने की कला

लेखक परिचय

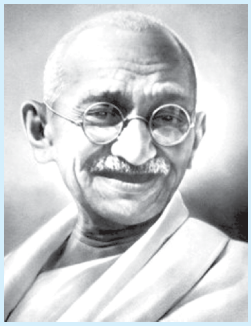

महात्मा गांधी

महात्मा गांधी का जन्म 2 अक्टूबर 1869 को गुजरात के पोरबंदर नगर में हुआ था। आपके पिता का नाम करमचंद तथा माता का नाम पुतलीबाई था। गांधी जी का पूरा नाम मोहनदास करमचंद गांधी था। इन्होंने अपनी प्रारंभिक शिक्षा राजकोट में पूरी की। उच्च शिक्षा के लिए आप इंग्लैण्ड गए तथा वहाँ से बैरिस्टर की उपाधि प्राप्त की। वे दक्षिण अफ्रीका गए और वहाँ भारतीयों तथा अपने साथ गोरों द्वारा किए गए दुर्व्यवहार का अहिंसात्मक ढंग से विरोध किया। दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटने पर श्री गोपालकृष्ण गोखले के मार्गदर्शन में उन्होंने अपना राजनीतिक जीवन प्रारंभ किया। आपने सत्याग्रह और असहयोग को अंग्रेजों के विरुद्ध अपने आंदोलन का आधार बनाया। अहिंसा आपका प्रमुख शस्त्र था। आपने भारतीयों को स्वदेशी तथा आत्मनिर्भरता का पाठ भी पढ़ाया। गांधीजी ने निम्न वर्ग के विकास के लिए प्राण-पण से कार्य किया। वे साम्प्रदायिक सद्भाव के पक्षधर थे। 'सत्य के प्रयोग' आत्मकथा उनकी महत्वपूर्ण पुस्तक है। इन्होंने 'हरिजन' तथा 'यंग इंडिया' नामक पत्र भी निकाले। आपकी 'हिन्द स्वराज्य' 'सर्वोदय' (रस्किन की 'अन टु दि लास्ट' पुस्तक का अनुवाद), दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों पर अत्याचारों का वर्णन करने वाली पुस्तक 'हरी पुस्तिका' महत्वपूर्ण पुस्तकें हैं।

केन्द्रीय भाव - गीता जीवन जीने की कला सिखाती है। साथ ही नर से नरश्रेष्ठ बनने का मार्गदर्शन भी गीता में है। अनेक महापुरुषों ने इसे कर्तव्यज्ञान का अद्वितीय कोष कहा है। महात्मा गांधी गीता को गीता मैया कहा करते थे। गीता में भारतीय तत्त्वज्ञान सारसर्वस्व के व्यावहारिक स्वरूप की प्रस्तुति है।

प्रस्तुत पाठ ''जीने की कला'' महात्मा गांधी की पुस्तक ''गीता माता'' से संग्रहीत एवं सम्पादित है, इसके लेखक मोहनदास करमचंद गांधी है। इसमें मानव बुद्धि को व्यावहारिक बनाने के सूत्र हैं।

महाभारत ग्रंथ में गीता सर्वोच्च स्थान पर विराजती है। उसका दूसरा अध्याय भौतिक युद्ध का व्यवहार सिखाने के बदले स्थितप्रज्ञ के लक्षण सिखाता है। स्थितप्रज्ञ का सांसारिक के साथ कोई संबंध नहीं हो सकता, यह बात मुझे तो उसके लक्षणों में ही निहित दिखाई दी है। परिवार के मामूली झगड़े के औचित्य या अनौचित्य का निर्णय करने के लिए गीता जैसी पुस्तक नहीं रची जा सकती।

अवतार का अर्थ है शरीरधारी विशिष्ट पुरुष। जीवमात्र ईश्वर के अवतार हैं, परन्तु लौकिक भाषा में सबको अवतार नहीं कहते। जो पुरुष अपने युग में सबसे श्रेष्ठ धर्मवान पुरुष होता है, उसे भविष्य की प्रजा अवतार के रूप में पूजती है। इसमें मुझे कोई दोष नहीं मालूम होता।

अवतार में यह विश्वास मनुष्य की अंतिम उदात्त आध्यात्मिक अभिलाषा का सूचक है। ईश्वर-रूप हुए बिना मनुष्य को सुख नहीं मिलता, शांति का अनुभव नहीं होता। ईश्वर-रूप बनने के लिए किए जाने वाले प्रयत्न का ही नाम सच्चा और एकमात्र पुरुषार्थ है और वही आत्म-दर्शन है। यह आत्म-दर्शन जिस प्रकार समस्त धर्मग्रन्थों का विषय है, उसी प्रकार गीता का भी है। लेकिन गीताकार ने इस विषय का प्रतिपादन करने के लिए गीता की रचना नहीं की है। गीता का उद्देश्य आत्मार्थी को आत्म-दर्शन करने का एक अद्वितीय उपाय बताना है।

वह अद्वितीय उपाय है कर्म के फल का त्याग।

इसी केन्द्र बिन्दु के आसपास गीता का सारा विषय गूँथा गया है।

जहाँ देह है वहाँ कर्म तो है ही। कर्म से कोई मनुष्य मुक्त नहीं है।

परन्तु प्रत्येक कर्म में कुछ न कुछ दोष तो होता ही है। और मुक्ति केवल निर्दोष मनुष्य को ही मिलती है। तब कर्म के बंधन से अर्थात् दोष के स्पर्श से कैसे छूटा जा सकता है? इस प्रश्न का उत्तर गीता जी ने निश्चयात्मक शब्दों में दिया है। 'निष्काम कर्म करके, यज्ञार्थ कर्म करके, कर्म के फल का त्याग करके, सारे कर्म कृष्णार्पण करके- अर्थात् मन, वचन और काया को ईश्वर में होम कर।'

परन्तु निष्कामता, कर्म के फल का त्याग, केवल कह देने से ही सिद्ध नहीं हो जाता। वह केवल बुद्धि नहीं हो जाता। वह केवल बुद्धि का प्रयोग नही है। वह हृदय-मन्थन से ही उत्पन्न होता है।

इस तरह हम देखते हैं कि ज्ञान प्राप्त करना, भक्त होना ही आत्म-दर्शन है। आत्म-दर्शन इससे भिन्न कोई वस्तु नहीं है।

ऐसे ज्ञानियों और ऐसे भक्तों को गीता ने स्पष्ट शब्दों में कह दिया है : ''कर्म के बिना किसी को सिद्धि प्राप्त नहीं हुई।''

फलत्याग का अर्थ कर्म के परिणाम के विषय में लापरवाह रहना नहीं है। परिणाम का और साधना का विचार करना तथा दोनों का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। इतना करने के बाद जो मनुष्य परिणाम की इच्छा किए बिना साधन में तन्मय रहता है, वह फलत्यागी कहा जाता है।

फलासक्ति के ऐसे कड़वे परिणामों से गीताकार ने अनासक्ति का अर्थात् कर्मफल के त्याग का सिद्धांत निकाला है और उसे दुनिया के सामने अत्यंत आकर्षक भाषा में रखा है।

सामान्यतः यह माना जाता है कि धर्म और अर्थ परस्पर विरोधी है ''व्यापार आदि सांसारिक व्यवहारों में धर्म का पालन नहीं हो सकता, धर्म के लिए स्थान नहीं हो सकता।

धर्म का उपयोग केवल मोक्ष के लिए ही किया जा सकता है। धर्म के स्थान पर धर्म शोभा देता है, अर्थ के स्थान पर अर्थ शोभा देता है।'' मैं मानता हूँ कि गीताकार ने इस भ्रम को दूर कर दिया है। उन्होंने मोक्ष और सांसारिक व्यवहार के बीच ऐसा कोई भेद नहीं रखा है, परन्तु धर्म को व्यवहार में उतारा है। जो धर्म व्यवहार में नहीं उतारा जा सकता वह धर्म ही नहीं है- यह बात गीता में कहीं गई है, ऐसा मुझे लगा है। अतः गीता के मत के अनुसार जो कर्म आसक्ति के बिना हो ही न सकें वे सब त्याज्य हैं-छोड़ देने लायक है। यह सुवर्ण नियम मनुष्य को अनेक धर्म संकटों से बचाता है। इस मत के अनुसार हत्या, झूठ, व्यभिचार आदि कर्म स्वभाव से ही त्याज्य हो जाते हैं। इससे मनुष्य जीवन सरल बन सकता है और सरलता से शांति का जन्म होता है।

इस विचारसरणी का अनुसरण करते हुए मुझे ऐसा लगा है कि गीताजी की शिक्षा का आचरण करने वाले मनुष्य को स्वभाव से ही सत्य और अहिंसा का पालन करना पड़ता है। फलासक्ति के अभाव में न तो मनुष्य को झूठ बोलने का लालच होता है, और न हिंसा करने का लालच होता है। हिंसा या असत्य के किसी भी कार्य का हम विचार करें, तो पता चलेगा कि उसके पीछे परिणाम की इच्छा रहती ही है।

गीता कोई सूत्रग्रंथ नहीं है। गीता एक महान ग्रन्थ है। हम उसमें जितने गहरे उतरेंगे उतने ही उसमें से नये और सुन्दर अर्थ हमें मिलेंगे। गीता जनसमाज के लिए है, इसलिए उसमें एक ही बात को अनेक प्रकार से कहा गया है। गीता में आए हुए महान शब्दों के अर्थ प्रत्येक युग में बदलेंगें और व्यापक बनेंगे, परन्तु गीता का मूल मंत्र कभी नहीं बदलेगा। यह मंत्र जिस रीति से जीवन में साधा जा सके उसे रीति को दृष्टि में रखकर जिज्ञासु गीता के महाशब्दों का मनचाहा अर्थ कर सकता है।

गीता विधि-निषेध (करने योग्य और न करने योग्य कर्म) बताने वाला संग्रह-ग्रन्थ भी नहीं है। एक मनुष्य

के लिए जो कर्म विहित (करने योग्य) हो, वह दूसरे के लिए निषिद्ध (न करने योग्य) हो सकता है। एक काल या एक देश में जो कर्म विहित हो, वह दूसरे काल या दूसरे देश में निषिद्ध हो सकता है। अतः निषिद्ध केवल फलासक्ति है और विहित अनासक्ति है।

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न

1. जीवमात्र किस का अवतार है ?
2. ईश्वर रूप हुए बिना मनुष्य को क्या नहीं मिलता ?
3. गांधी जी के अनुसार गीता में किस युद्ध का वर्णन किया गया है ?
4. हृदय में भीतर के युद्ध को रसप्रद बनाने के लिए की गई कल्पना क्या है ?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. गीता की शिक्षा का आचरण करने वाले मनुष्य का स्वभाव कैसा होता है ?
2. रीति को दृष्टि में रखकर गीता के मूलमन्त्र का जिज्ञासु क्या कर सकता है ?
3. अवतार का क्या अर्थ है ?
4. महात्मा गांधी जी की दृष्टि में निषिद्ध क्या है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. गीता के अध्ययन से गांधी जी को क्या अनुभूति हुई ?
2. आत्मदर्शन से सम्बन्धित गांधी जी का दृष्टिकोण स्पष्ट कीजिए।
3. गांधी जी के अनुसार गीता का उद्देश्य क्या है ?
4. गांधी जी ने फलत्यागी किसे कहा है ?
5. गीताकार ने किस भ्रम को दूर कर दिया है ?
6. निम्नलिखित पक्तियों का भाव पल्लवन कीजिए-

   (क) "जहाँ देह है वहाँ कर्म तो है ही।"

   (ख) "कर्म के बिना किसी को सिद्धि प्राप्त नहीं हुई।"

भाषा अध्ययन

निम्नलिखित शब्दों की शुद्ध वर्तनी लिखिए -

1. गिता, ऐतिहसिक, धरम, फलासक्ति, सुत्रग्रन्थ।

2. निम्नलिखित शब्दों को वाक्यों में प्रयोग कीजिए -

विश्वास, अहिंसा, चिन्तन-मनन, अभिलाषा, स्वभाव

3. दिए गए शब्दों के विलोम शब्द लिखिए -

उत्पत्ति, निरर्थकता, सच्चा, विधि, निषिद्ध

4. रिक्तस्थान की पूर्ति कीजिए -

1. महाभारत में ..... सर्वोच्च स्थान पर विराजती है।
2. अद्वितीय उपाय है ..... के फल का त्याग।
3. गीता का ..... आत्म दर्शन करने का एक अद्वितीय उपाय है।

5. निम्नलिखित वाक्यांश के लिए एक-एक शब्द लिखिए-

1. संसार से संबंधित
2. दोष से मुक्त
3. काम से रहित
4. जानने की इच्छा रखने वाला
5. धर्म का पालन करने वाला

योग्यता-विस्तार

1. विभिन्न स्रोत से ज्ञात कीजिए कि गीता ग्रन्थ का अनुवाद किन-किन भाषाओं में हुआ है?
2. आप के मन में कर्म से संबंधित कौन-कौन से भाव उत्पन्न हुए, लिखिए।
3. विभिन्न पत्र पत्रिकाओं एवं ग्रन्थों में प्रकाशित गीता से सम्बन्धित लेखों का संग्रह कीजिए।
4. गीता से प्रेरणा ग्रहण कर महान, बनने वाले व्यक्तियों का जीवन परिचय लिखिए।
5. अन्यान्य भाषाओं में लिखित उन ग्रन्थों का परिचय प्राप्त कीजिए जो गीता की तरह प्रेरण देती है।

शब्दार्थ

स्फुरणा=भावों का अंकुरण, ***अमानुषी***=जो मनुष्य से सम्बन्धित न हो, ***अतिमानुषी***=मानव धर्म से परे (दैवी), ***स्थितप्रज्ञ***=स्थिर बुद्धिवाला, ***आत्मदर्शन***= आत्मा के बारे में निरूपण करने वाला शास्त्राा, ***आत्मार्थी*** = आत्मा को पाने के लिये उत्सुक, ***निष्काम***=कामना रहित, ***फलासक्ति***= फल में लगाव, ***अनासक्ति***=आसक्ति रहित, लगाव रहित, जिज्ञासु-जानने की इच्छा रखने वाला, **परिष्कृत** = शुद्ध, **प्रवृत्त** = कार्य में संलग्न, **परावृत्त** = भागना (मैदान छोड़ना), **कृतनिश्चय** = सोचा हुआ काम, **आप्त** = पूर्ण, **उदात्त** = श्रेष्ठ, **आत्मार्थी** = आत्मा को जानने का इच्छुक।

***